प्राचीन भारत में वृष्टि और अनावृष्टि

देवर्षि कलानाथ शास्त्री

(राष्ट्रपति सम्मानित), प्रधान सम्पादक ''भारती''संस्कृत मासिक
पीठाचार्य, भाषामीमांसा एवं शास्त्रशोध पीठ - विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, जयपुर
पूर्व अध्यक्ष - राजस्थान संस्कृत अकादमी
आधुनिक संस्कृत पीठ - जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय
पूर्व निदेशक - संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार
सदस्य - संस्कृत आयोग, भारत सरकार

भारत के कुछ भाग में सूखा अर्थात् दुर्भिक्ष या अनावृष्टि का प्रकोप प्रायः सदा रहता आया है। आए दिन ऐसे समाचार आते रहते हैं, कि उत्तर भारत का अमुक भाग अनावृष्टि के आतंक से त्राहि त्राहि कर रहा है। सावन सूखा गया, पछुआ हवाएँ मेघों का रास्ता रोके खड़ी हैं। बूंदों की आशाएँ धूमिल हो गईं। 'दो दिन में मानसून आएगा' की चातक-तृष्णा एक माह से रह रह कर आशा बँधाती हैं, पर न जाने किस अभिशाप ने मौसम-विज्ञानियों के सारे अंकगणित उलझा दिये, ज्योतिषियों और कर्मकांडियों की पवनधारणाएँ झुठला दीं, स्तुतियां बहरी हो गईं। आनन-फानन में समस्याओं के हल निकाल फेंकने वाले कम्प्यूटर मौन हैं। इस जनपीड़ा की करुणा में न जाने किन किन पंडितों द्वारा अखंड पाठ किये जाते हैं, इन्द्र को गुहार की जाती है, यज्ञ-दान किये जाते हैं, पूजा-जप किये जाते हैं। उनको प्रचार की वाँछा ने ऐसा करने की प्रेरणा दी हो, सो भी बात नहीं है। जनजीवन को अकाल की इस त्रासदी से किसी भी प्रकार मुक्ति दिलाने की बलवती इच्छा, जो बच्चे-बच्चे के हृदय में है, यह सब कुछ करवा रही है।

सरकार हो या एक अदना सा नागरिक, इस दारुण अग्निपीड़ा से देश को बचाने के प्रयत्न में कोई कसर नहीं छोड़ता, पर एक बूंद नहीं बरसती। विज्ञान कहता है समुद्र की सतह ही ठंडी नहीं हुई इस बार, तभी तो मौसम विज्ञान के आकलन भी विफल हो रहे हैं। कोई प्रदूषण को दोषी ठहराता है, कोई जंगलों के कटाव को। तब लगता है, क्या इस देश में इस पीढ़ी को ही इन्द्र का शाप है या पहले भी कभी ऐसा होता था? मानसून पहले नियमित आता था या अनिश्चित था और कभी भी रूठ जाता था? अथवा उसका जन्म इसी सदी में हुआ है? ज्यों-ज्यों इतिहास और पुराकथाओं के पृष्ठ पलटते हैं, लगता है अकाल, अनावृष्टि, प्रकृति की यह आँख मिचौनी और वृष्टि की अनिश्चितता इस देश को तो अनादिकाल से आतंकित करती रही है। इसके उपाय वह सदा

से खोजता रहा है। प्रत्येक युग में अचानक आये अकाल की गाथाएँ मिलती हैं। पुराणों में ऐसे भीषण अकालों की कथाएँ है जब खाने को कुछ नहीं मिला, पशुओं का मांस भी नहीं, क्योकि पशु भी मर गये थे। विश्वामित्र या वामदेव जैसे ऋषियों को भी कुत्ते का मांस या आँत खाकर प्राण धारण करना पड़ा था। बहुत से युग ऐसे बीते, जब किसान की आँखें आग उगलते आसमान को निहारते पथरा गईं।

कृषक बन्धु युग युग से तेरी यही कहानी।

अंबर में है आग और आंखों में पानी ॥

कम से कम तीन चार हजार वर्षों के लिखित इतिहास वाले इस कृषिप्रधान देश में ऐसी अनावृष्टि का काल कैसा होता होगा ? क्या करते होंगे लोग, कृषक, राज ऋषि ?

वेदकाल में –

वेदों से लेकर पुराणों तक तभी तो वृष्टि को वरदान और सूखे को अभिशाप कहा गया है। '**माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः, पर्जन्यः पिता स उनः पिपर्तु**' कह कर अथर्ववेद ने बताया, भूमि मेरी माँ है, मैं उसका पुत्र हूँ। पिता है मेरा पर्जन्य, जो जल बरसाकर हम सबको तृप्त करता है। तभी तो यह हुआ कि हर देवता से ऋषि प्रार्थना करता था कि जल बरसाओ। आज जिस इन्द्र देवता को गाँव का किसान वर्षा का एक मात्र देवता मानता है, वह मूलतः केवल वृष्टि का देवता नहीं था। वह राजा था, प्रशासक था, योद्धा था, महारथी था– पर वर्षा के प्रयत्नों में अग्रणी और सफल रहने से वह कैसे वर्षा का देवता बन गया, कोई नहीं जानता। कौन कौन वर्षा के देवता थे, उन्हें कैसे रिझाया जाता था ? इस बात के पूरे अभिलेख तो आज भी उपलब्ध नहीं हो पाते हैं, किन्तु विद्वानों ने इस प्रकार के अध्ययन अवश्य दिये हैं कि, प्राचीन भारत में मौसम के पूर्वानुमान कैसे किये जाते थे, अनावृष्टि और बाढ़ का सामना कैसे किया जाता था। भारत के मौसमविज्ञान विभाग के सेवानिवृत्त उपनिदेशक डॉ. ए.एस. रामनाथन् ने जो वेदविज्ञान के भी मनीषी हैं, ऐसे अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। अन्य विद्वानों ने भी ऐसे अध्ययन किये हैं। जयपुर के मधुसूदन ओझा ने '**कादम्बिनी**' नामक ग्रंथ वृष्टिविज्ञान और वर्षा के पूर्वानुमानों पर लिखा था। लगता है वर्षा की अनिश्चितता से त्रस्त भारतीय मनीषा ने वर्षा की सही भविष्यवाणी का हर युग में भरपूर प्रयत्न किया। ज्योतिष की पवनधारणा इसी का प्रतीक है। इन्दौर के वीरसेन वेदश्रमी ने '**वैदिक वृष्टि विज्ञान**' ग्रंथमाला ही निकाल डाली। मोतीलाल शास्त्री ने भी अपने ग्रंथों में यत्र तत्र वृष्टिविद्या के संकेत किये हैं। मीमांसा शास्त्रियों ने तलाश की है, कि कौन–कौन से यज्ञ वृष्टि के लिए किये जाते थे।

वर्षा के देवता -

इस विषय में उल्लेखनीय है कि वेद के ऋषियों ने वर्षा के लिए जिम्मेदार देवता कौन-कौन से माने हैं। पर्जन्य तो वर्षा का ही देवता माना गया था, जो बादल बन कर बरसता है। समुद्र से पानी सोख कर अपनी किरणों के गर्भ में उसे लेने की क्रिया करने वाला देवता सूर्य था। अत: उसका भी हाथ वर्षा में माना जाता था। सोम देवता (तत्व) की भूमिका भी इसमें महत्वपूर्ण थी, किन्तु पर्जन्य के बाद सर्वाधिक उपयोगी और वर्षा का सीधा कारक माना गया था मरुत् नामक देवताओं को, जो हवाओं का ही नाम है। इनका समूह मरुद्गण कहा गया है। ये हवाएँ ही बरसात लाती हैं इसका बहुत स्पष्ट और विस्तृत विवरण वेदों में मिलता है। ऋग्वेद के अनेक सूक्त मरुतों के लिए हैं, जिनमें वृष्टिविद्या तो है ही बरसात के लिए। मरुतों से अद्भुत और उत्कृष्ट प्रार्थनाएं भी की गई हैं।

रमयत मरुतः श्येनमायिनं मनोजवसं वृषणं सुवृक्तम् ।
येन शर्ध उग्रमवसृष्टमेति, तदश्विना परिधत्तं स्वस्ति।

(कृष्णयजुर्वेद-2/4/7)

इसकी व्याख्या में प्रसिद्ध मीमांसक पं. पट्टाभिराम शास्त्री ने स्पष्ट किया है, कि किस प्रकार मरुतों के भेद प्राचीन ऋषियों ने बताये है। पश्चाद्वात (पछुआ हवा) को वृष्टि का अवरोधक मान कर उनके निवारण और पुरोवात (पुरवैया) के आमंत्रण की प्रक्रिया कारीरी इष्टि अर्थात् करीर (कैर, टैटी) की समिधा से किये जाने वाले यज्ञ के द्वारा पूरी की जाती थी। मरुतों की इस भूमिका के विवरण से लगता है कि मानसून के व्यवहार का गहरा अध्ययन उस समय भी किया गया था। वर्षा के अन्य देवता थे-द्यावा-पृथिवी, अश्विनौ आदि।

इन्द्र को मरुद्गणों का नेता मान लिया गया और धीरे-धीरे वह वर्षा का भी देवता बन गया। इन्द्र द्वारा वृत्रासुर के वध की कथा को भी आकाश में निश्चल हुए अप् (जल) तत्व को वज्र (बिजली) से तोड़ कर रोके हुए जल को बहा देने के प्रतीक के रूप में अनेक विद्वानों ने व्याख्यायित किया है। तभी से लोक-भावनाएँ इन्द्र देवता और बिजली रानी को बरसात से जोड़ बैठी। वैसे अनेक देवताओं की शक्तियों को वर्षा के लिए आमंत्रित किया जाता था। ताप का अध्ययन भी किया जाता था और अन्तरिक्ष की गतिविधियों का भी। इन्हें यज्ञ कहा जाता था। यों विज्ञान और धर्म साथ साथ चलते थे। विश्वामित्र द्वारा कुत्ते का मांस खाने की कथा को भी पर्जन्येष्टि का प्रतीक बताया गया है अर्थात् विश्वामित्र ने वह श्येन याग किया था, जिसमें कुत्ते की आँत की आहुति देने से वर्षा होने का फल बताया गया है।

पुराणों में-

पुराणों में तो ऐसी गाथाएँ सैकडों हैं, जिनमें बताया गया है कि किसी राजा के राज्य में जब भीषण अकाल पड़ गया तो उसने क्या क्या प्रयत्न किये। एक सर्वाधिक प्रसिद्ध गाथा यह है कि अयोध्या के राजा दशरथ के मित्र अंगराज (बिहार के किसी अंग नामक प्रदेश के राजा) लोमपाद के राज्य में अकाल पड़ने पर उसका एक मात्र उपाय यह बताया गया, कि यदि ऋषि-कुमार ऋष्यशृंग उनकी राजधानी में आ जाते हैं, तो उनके यज्ञ से वर्षा अवश्य होगी। ऋष्यशृंग नितांत एकांत-सेवी ब्रह्मचारी थे। उन्हें सुन्दरियों द्वारा भरमा कर राजधानी लाया गया और राजा लोमपाद ने अपनी कन्या शांता का विवाह उनसे करके उन्हें सम्मानित किया। तुरन्त भरपूर वर्षा हो गई। अकाल के समय गरीबों को अन्न बँटवाने तथा पेयजल और भोज्य पदार्थों की सुविधा प्रदान करने के प्रयत्नों का उल्लेख भी मिलता है। इसके बाद मध्यकाल और मुगलकाल में भयंकर अकालों की तवारीख तो जानी पहचानी है। ऐसे अवसरों पर राजाओं और सेठों द्वारा किये जाने वाले धर्मार्थ कार्यों और अकाल राहत कार्यों की जानकारी भी इतिहास से मिल सकती है।

सदा से यही रही है वर्षा और अकाल की लुकाछिपी से जूझते इस देश की नियति । इस अनिश्चितता ने उसे सदा आतंकित ही रखा है। जहाँ उसने इस अनिश्चय को तोड़ने और वर्षा ऋतु आने से पहले ही वर्ग विशेष में वर्षा की मात्रा कहाँ ,कब, कैसे होगी ? इसका आकलन पहले से कर पाने के भरसक प्रयत्न किये हैं, वहीं रूठे पर्जन्य को मनाने के भी हर संभव उपाय खोजे हैं। उन उपायों में कौन-कौन से आज भी कारगर हो सकते हैं ? यह तो तभी देखा जा सकेगा, जब उन उपायों की तलाश पूरी हो जाए।